© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED
ISSN : 2348 - 5612 | Volume : 04 , Issue : 08 | October - December 2017

यौगिक ग्रन्थों में समाधि का स्वरूप : एक विवेचनात्मक अध्ययन

[1]सुमन देवी, [2]डा0 विरेन्द्र कुमार

एम0 ए0 योग , सहायम प्राध्यापक योग विज्ञान , शारीरिक शिक्षा विभाग,
चौ. रणबीर सिहं विश्वविधालय, जीन्द (हरियाणा)

आलेख सार :– विभिन्न यौगिक ग्रन्थों में ऋषि–मुनियों ने अपनी चेतना के सर्वोच्च तल पर पहुंचकर समाधि के परिपेक्ष्य में जो ज्ञान अग्नि प्रकट की, उसका विवेचनात्मक अध्ययन किया गया है। बताया गया है कि किस तरह उन्होनें समाधि के विषय में अपने अनुभव से मानव जीवन के कल्याण हेतू प्रकट किया। समाधि क्या है और मानव जीवन में लिए क्यों आवश्यक है और किस तरह समाधि से मनुष्य अपने सर्वोच्च लक्ष्य की प्राप्ति कर सकता है, इन पहलुओं पर भी विचार किया गया है।

ISSN : 2348-5612 © URR

मुख्य शब्द : आसन , व्यायाम, योग, साधना , ध्यान

प्रस्तावना:– वर्तमान समय में विश्व में लाखों लोग ध्यान का नियमित अभ्यास कर रहे हैं। कुछ मानसिक शक्तियों जैसे दूर श्रवण तथा विचार संप्रेषण के विकास के उद्देश्य से ध्यान का अभ्यास करते हैं तो कुछ का लक्ष्य ध्यान के तात्कालिक लाभ विश्रान्ति तथा मानसिक स्पष्टता प्राप्त करना होता है। वे मात्र इन लाभों की प्राप्ति हेतू ध्यान की साधना करते है; न कि किसी दूरगामी लाभ के लिए। कुछ लोगों के लिए ध्यान चेतना की सीढ़ी पर चढ़ने दुःख–पीड़ा से छुटकारा पाने तथा जन्म–मृत्यु के चक्र से मुक्ति का अगला सोपान होता है।

अनेक लोगों ने भौतिक लाभों के पीछे दौड़ना बंद कर दिया है, क्योंकि उन्हें इस बात का इत्मियान हो गया है कि इस दौड़ से उन्हें तब तक पूर्णता तथा कृतकृत्यता का अनुभव नहीं हो सकता। जब तक कि वे मनुष्य के लिए निर्धारित अंतिम लक्ष्य, सीमित व्यक्तिक चेतना से ब्रह्माण्ड़ीय अनन्त चेतना में प्रवेश नहीं कर लेते। उन्हें आत्मा की खोज करनी चाहिए जो निम्न प्रकृति से अलग होती है। मानव के अन्दर मानव, मन के पीछे मन तथा अनुभव के आधार को भी अनुभव चाहिए। जीवन में एक क्षण ऐसा भी आना चाहिए। जब हम सब देख सकें कि 'मै क्या हू' इसे ही वास्तविक साक्षात्कार कहते हैं। कुछ लोग इसे ईश्वर साक्षात्कार, समाधि, मोक्ष, निर्वाण, बुद्धत्व, सर्वोच्च से मिलन आदि भिन्न उपाधियों से जानते हैं। यहीं वह अंतिम लक्ष्य है जिसे प्राप्त करना हम सब का उद्देश्य होना चाहिए। यही हमें पूर्ण सिद्धि प्रदान करता है जिसके बाद न तो कुछ पाने की कामना शेष रहती है और न ही कुछ खोने का खतरा।

समाधि क्या है :–जैसा कि कुछ लोगों की मान्यता है, समाधि मूर्च्छावस्था आनन्दोत्तेजना अथवा अचेतनता है लेकिन ऐसा नहीं है। समाधि वह अवस्था है, जहां साधक चेतना के उस बिन्दु पर पहुंचता है, जिसमें परे कोई चेतना नहीं होती। यह चेतना का गहनतम स्तर है। जहां व्यक्तित्व का बोध भी समाप्त हो जाता है। यह सजगता की वह उच्च अवस्था है जहां मानसिक शरीर भी कार्य नहीं करता। जब वैयक्तिक चेतना इन्द्रियों की पकड़ से मुक्त होती है तो समाधि का उदय होता है।

समाधि शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है। 'सम' और 'आधि'। सम का अर्थ है–बराबर, समान हो जाना या शांत हो जाना तथा आधि कहतें है–मन के विकारों को। अतः मन के विकारों को समान या शांत करना समाधि है।

यौगिक ग्रन्थों में समाधि का स्वरूप :–भारत देश प्राचीनकाल से ही ऋषि–मुनियों की तपोभूमि कहा जाता रहा है। यहाँ समय–समय पर ऋषि–मुनियों ने अपनी योगमाया के बल पर अनेक कीर्तिमान स्थापित किए और विभिन्न यौगिक ग्रन्थों की रचना की। इन यौगिक ग्रन्थों में समाधि के स्वरूप को अलग–अलग ढ़गं से उल्लेखित किया गया है। जो इस प्रकार हैः–

योगसूत्र में *महर्षि पतंजलि* योग को परिभाषित करते हुए स्पष्ट करते हैं कि योग चित वृत्तियों का सर्वथा रूक जाना है।[(1)] अर्थात् यहां चित्त निश्चल स्थिर हो जाता है, समाधि अवस्था में भी चित्त शांत, स्थिर हो जाता है। अतः इसलिए योग को समाधि कहा जा सकता है। *महर्षि व्यास* ने भी प्रथम सूत्र में ही कहा है–योग ही समाधि है[(2)] *महर्षि पतंजलि* ने इसे अष्टागं योग के प्रकरण में भी बताया है–जब (ध्यान में) मात्र (लक्ष्य) ध्येय की ही प्रतीति होती है तथा चित्त का निज स्वरूप

शून्य सा हो जाता ह, तब वही (ध्यान ही) समाधि हो जाता है[3] *व्यास जी* कहते है–ध्येयाकार ध्यान ही जब ध्येय स्वभाव के आवेश से अपने ज्ञानात्मक स्वभाव से शून्य के समान होता है, तब उसे समाधि कहते है[4]

घेरण्ड संहिता में *महर्षि घेरण्ड* समाधि के विषय में कहते हैं–समाधिरूप परम योग बड़े भाग्य से प्राप्त होता है। वह उन्हीं को प्राप्य है जो गुरूभक्त हैं और गुरू की जिन पर कृपा है। विद्या की प्रतीति, अपने गुरू की प्रतीति, आत्मा की प्रतीति और मन का प्रबोध जिसे दिनों–दिन बढ़ता है, उसी योगी को समाधि के अभ्यास का अधिकारी समझना चाहिए। शरीर से मन को भिन्न करके परमात्मा में लगा देने से योगी मुक्त होता है। मैं ब्रह्म से भिन्न नहीं, वरन् ब्रह्म ही हूँ। मैं शोकयुक्त नहीं, वरन सच्चिदानंद स्वरूप और नित्यमुक्त स्वभाव वाला हू[5–8]

इस प्रकार उन्होनें चार गुणों की व्याख्या की है–विधि या विद्या पर विश्वास, गुरू पर विश्वास, स्वयं पर विश्वास और अन्तःकरण की ग्रहणशीलता मे वृद्धि। जब यह परिस्थिति हमारे जीवन में उत्पन्न होती है, तभी गुरू हमें उचित निर्देश देकर समाधि तक पहुँचा सकता है। समाधि योग के छः भेद हैं–ध्यानयोग, नादयोग, रसानन्दयोग, लयसिद्धियोग, भक्तियोग और राजयोग। ध्यानयोग की समाधि शाम्भवी मुद्रा से, नादयोग की खेचरी मुद्रा से, रसानंदयोग की भ्रामरी मूद्रा से, लयसिद्धियोग की योनिमूद्रा से, भक्तियोग की मनोमूर्च्छा से और राजयोग समाधि कुंभक से सिद्ध होती है।[9–10]

श्री भोजराज के शब्दों में–जिसमे मन को विक्षेपों से हटाकर यथार्थता से धारण किया जाता है, अर्थात् एकाग्र किया जाता है, वह समाधि है[11]

श्रीमद्भगवद्गीता में भी समाधि की परिभाषा दी गई है, जब *अर्जुन* पूछता है, तब समाधि की परिभाषा देते हुए *भगवान श्री कृष्ण* कहते हैं कि समाधि एक ऐसी स्थिति का नाम है जहाँ पर मनुष्य बंधन–मुक्त है। जहाँ पर राग–द्वेष, लोभ–मोह, छल–कपट, अहिंसा आदि सांसारिक बंधन मनुष्य को प्रभावित नहीं करते और वह जीवन की हर परिस्थिति में समभाव धारण किए रहता है। उस समभाव में उसे बराबर की स्वतंत्रता प्राप्त होती है, पुण्य कर्मो में भी, पाप कर्मो में भी। समाधि की वह स्थिति आत्मशुद्धि की स्थिति है[12] जिस समय शास्त्रीय मतभेदों से विचलित हुई बुद्धि निश्चल हो जाएगी और समाधि में अचल हो जाएगा, उस समय तू योग को प्राप्त हो जाएगा।[13]

जो दुःखरूप संसार के संयोग से रहित है, तथा जिसका नाम योग है; उसको जानना चाहिए। वह योग न उकताए हुए अर्थात् धर्य और उत्साहयुक्त चित्त से निश्चयपूर्वक करना कर्तव्य है[14] जिसका अन्तःकरण ज्ञान–विज्ञान से तृप्त है, जिसकी स्थिति विकार रहित है, जिसकी इन्द्रियाँ भलीभांति जीती हुई है और जिसके लिए मिट्टी पत्थर और सुवर्ण समान है, वह योगी युक्त अर्थात् भगवत्प्राप्त है[15]

योग के अभ्यास से निरूद्ध चित्त जिस अवस्था में उपराम हो जाता है और जिस अवस्था में परमात्मा के ध्यान से शुद्ध हुई सूक्ष्म बुद्धि द्वारा परमात्मा को साक्षात् करता हुआ सच्चिदानंद परमात्मा में ही सन्तुष्ट रहता है[16]

इन्द्रियों से अतीत, केवल शुद्ध हुई सूक्ष्मबुद्धि द्वारा ग्रहण करने योग्य जो अनन्त आनन्द है। उसको जिस अवस्था में अनुभव करता है और जिस अवस्था में स्थित यह योगी परमात्मा के स्वरूप से विचलित होता ही नहीं[17]

गीता में एक अन्य जगह कहा गया है–परमात्मा की प्राप्तिरूप जिस लाभ को प्राप्त होकर उससे अधिक दूसरा कुछ भी लाभ नहीं मानता और परमात्मप्राप्तिरूप जिस अवस्था में स्थित योगी बड़े भारी दुःख से भी चलायमान नहीं होता[18] क्योंकि जिसका मन भली प्रकार शान्त है, जो पाप से रहित है और जिसका रजोगुण शान्त हो गया है, ऐसे इस सच्चिदानदंघन ब्रह्म के साथ एकीभाव हुए योगी को उत्तम आनन्द प्राप्त होता है[19]

रामचरितमानस और *उपनिषदों* में भी समाधि की चर्चा की गई है। *ईशावास्य उपनिषद* का शान्ति मंत्र इसी भाव को व्यक्त करता है– पूर्ण से पूर्ण को निकालने के पश्चात् भी पूर्ण ही शेष रहता है।वह अपूर्ण नहीं होता। यह भाव ब्रह्मावस्था का ही वर्णन करता है। जब मनुष्य जीवात्मा का रूप धारण करता है तब उस रूप में वह पूर्ण है, क्योंकि उसके भीतर अपने मूल वास्तविक स्वरूप को पहचानने की क्षमता रहती है और जब वह उसे पहचान जाता है तब उस पूर्ण का बोध मनुष्य को होता है। जब बोध नहीं होता, वह अपने को नहीं पहचानता, तब भी पूर्ण मनुष्य ही रहता है[20] योग मे समाधि को एक वृत्ति का रूप भी दिया गया है, जिसको कहते है *ब्राह्मी वृत्ति*–एक ऐसी वृत्ति, ऐसी अवस्था जो हमेशा ब्रह्म का अनुसरण करे। *गोस्वामी तुलसीदास जी* ने *रामायण* में लिखा है–

गो गोचर जहँ लग मन जाई। सो सब जानेऊ माया भाई।।
सोई जानइ जेहि देहु जनाई। जानत तुम्हहि तुम्हइ होई जाई।।

कठोपनिषद् में एक सुन्दर परिभाषा है–जब मन सहित पाचँ ज्ञानेन्द्रियाँ शान्त हो जाती है और बुद्धि के व्यापार भी थम जाते हैं तब वह अवस्था सर्वोच्च अवस्था है [21] यही वह अवस्था है जब मन की अन्तः और बाह्य वृत्तियों का अभाव हो जाता है और केवल सजगता रह जाती है। समाधि से आत्म–साक्षात्कार प्राप्त होता है।

योगचूड़ामणि उपनिषद में समाधि की अत्यंत सौम्य व्याख्या और परिभाषा है– योगियों ने कहा है कि बारह प्राणायामों(दीर्घ) से एक प्रत्याहार होता है, बारह प्रत्याहारों (दीर्घ) से एक धारणा होती है। बारह धारणाओं से एक ध्यान बनता है, और बारह ध्यान से एक समाधि घटित होती ह[22]

कठोपनिषद में वर्णन प्राप्त होता है–हृदय की 100 नाड़ियाँ हैं। इनमें से एक ब्रह्म की और गई। इस नाड़ी के द्वारा उर्ध्वगमन करता हुआ जीवात्मा अमरत्व को प्राप्त करती है। अन्य नाड़ियाँ उत्क्रमण में लोकान्तर में गमन कराने वाली होती है[23]

अमृतनाद उपनिषद में शड्.गयोग का वर्णन है–प्रत्याहार, ध्यान, प्राणायाम, धारणा, तक और समाधि–यह शड्.गयोग कहलाते है।[24]

तेजोबिन्दु उपनिषद् में परब्रह्मस्वरूप पचंदशांगयोग कहा गया है। पचंदश अगं निम्न हैं–यम, नियम, त्याग, मौन, देश, काल, आसन, मूलबंध, देहसाम्य, दृक्स्थिति, प्राणसंयमन, प्रत्याहार, धारणा, आत्मध्यान और समाधि। ये अंग क्रम से बताए गए है[25]

ध्यानबिन्दु उपनिषद में ब्रह्मध्यानयोग का प्रतिपादन है। इसमें योग को शड्.गयोग के रूप में बताया गया है, योग के ये छः अंग इस प्रकार हैं–आसन, प्राणसंरोध, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान एवं समाधि बताया गया है[26]

कठोपनिषद् में यमराज ने ऋषिकुमार नचिकेता को उपदेश देते हुए योग से अमृत पद की प्राप्ति बतायी है–उस परमदेव को अध्यात्म योग के ज्ञान से भली प्रकार जानकर साधक हर्ष–शोक को त्याग देता है[27]

श्वेताश्वर उपनिषद के अनुसार– योगाग्निमयं शरीर जिस को प्राप्त होता है, उसे कोई रोग नहीं होता, बुढ़ापा नहीं आता और मृत्यु भी नहीं होती[28]

आर्य सत्यों की समीक्षा करने से स्पष्ट प्रतीत होता है कि *बुद्ध* का मार्ग *उपनिषद्* प्रतिपादित मार्ग से एकांत भिन्न नहीं है। *बौद्ध दर्शन* में तीन साधन हैं–शील, समाधि और प्रज्ञा। समाधि से तीन प्रकार की विधाएं उत्पन्न होती हैं –पूर्व जन्म की स्मृति, जीव की उत्पत्ति और विनाश का ज्ञान तथा चित्त के बाधक विषयों की जानकारी।

बुद्ध का यह आर्य सत्य उनके धर्म आर नीतिशास्त्र का आधार स्वरूप है। इस लिए इस मार्ग की महत्ता अत्यधिक बढ़ गई है। इस मार्ग को *अष्टागिंक मार्ग* कहा गया है क्योंकि इस मार्ग के आठ अंग बताए गए हैं –संम्यक् दृष्टि, सम्यक् व्यायाम, सम्यक् स्मृति, सम्यक् संकल्प, सम्यक् वाक्, सम्यक् कर्म, सम्यक् आजीविका और सम्यक समाधि। बौद्ध दर्शन में समाधि की चार अवस्थाएं मानी गई हैं।

वैदिक गोमुख से प्रवाहित हुई योग की यह पुण्य परम्परा पुराणों तक प्रवाहित होती हुई आई। पुराण वेदों की आत्मा है[29]

ब्रह्मपुराण में कहा गया है–ब्रह्म में ही चित्त को पूर्णतया स्थिर करन को योग कहकर इसके यम,नियम,आसन,प्रायाणाम,प्रत्याहार, धारणा,ध्यान और समाधि।ये आठ अगं बताएं गए है[30]

अग्निपुराण मे चित्त की दही के समान, निर्वात में अग्नि शिखा के समान,परब्रह्म में स्थिरता को समाधि कहा गया है,समाधि के परिणाम के संदर्भ में वर्णन मिलता है कि योगी न सुनता है,न सूघँता है,न देखता है,न रस ग्रहण करता है,न स्पर्श ग्रहण करता है,न संकल्प करता है,न अंह भाव का अनुभव करता है वह काष्ठवत् हो जाता है और ईश्वर में लीन हो जाता है। समाधि सिद्धि होने पर योगी को अनेक सिद्धियों,देवलोक के भोग,देवों से आमंत्रण, अणिमा आदि सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं किन्तु यह सब योग मार्ग में विघ्न हैं अतः साधक को इनको तृण के समान त्याग देना चाहिए[31]

नारद और *गरूड़ पुराण* में भी समाधि का वर्णन किया गया है। *रुद्रायमल तंत्र* में समाधि का उल्लेख इस प्रकार किया गया है– समाधि से व्यक्ति महाज्ञानी होता है तथा समाधि के बल से शरीर सूर्य–चन्द्र तक जा सकता है।[32]

हठयोग प्रदीपिका के अनुसार–योग शब्द समाधि का वाचक होकर जीवात्मा एवं परमात्मा की एकता से समस्त संकल्पों के नष्ट हो जाने पर प्राप्त होता है।

स्वात्माराम जी चतुर्थ उपदेश में कहते हैं– अब समाधि की उत्तम प्रक्रिया कहता हूं। जो मरणशीलता का नाश करती है, सुख का उपाय है और परब्रह्म आनन्द को प्राप्त करवाती है[33]

राजयोग, समाधि, उन्मनी, मनोन्मनी, अमरत्व, लय, तत्व, शून्याशून्य, परमपद, अमनस्क, अद्वैत, निरालम्ब, निरंजन, जीवनमुक्ति, सहजा तथा तूर्या से सब एक ही अर्थ के वाचक है[34] जैसे नमक पानी में मिल जाने से उसके साथ एकरूप हो जाता है, वैसे ही आत्मा व मन की एकरूपता समाधि कही जाती है[35] जब प्राण क्षीण होकर चित्त में लीन हो जाता है तब दोनों की एकरूपता हो जाने को समाधि कहा जाता है[36] जीवात्मा और परमात्मा दोनों की एकरूपता और समता हो जाने पर इच्छामात्र का अभाव हो जाता है और वही समाधि कही जाती है[37]

भक्तिसागर में कहा गया है– जब समाधि लगती है तब योगी को एक आनंद की प्राप्ति होती है, तब ऐसा समझना चाहिए कि योग सिद्ध हो गया है। इस स्थिति में मन की सारी क्रियाएं शून्य हो जाती है। इस अवस्था में ध्याता और ध्यान एक हो जाते हैं। यहाँ पर द्वैत का भाव नहीं रहता है। इन सबसे मुक्ति मिल जाती है यहाँ तनिक भी दुःख नहीं है। न कोई विद्या, न वेदान्त, न शंका, न विवाद है। ऋद्धियां व सिद्धियाँ भी यहाँ समाप्त हो जाती हैं। केवल आनंद ही आनंद जहाँ पर है। यही शून्य समाधि है।[38]

योगवशिष्ठ में कई ऐसे प्रसंग मिलते हैं जहां किसी के समाधिस्थित होने का वर्णन मिलता है जो निम्न है –*सरस्वती की आज्ञा से पति के शव को फूलों की ढेरी में रखकर समाधिस्थित हुई लीला का पति के वासनामय स्वरूप एवं राजवैभव को देखना तथा समाधि से उठकर पुनः राजसभा में सभासदों का दर्शन करना।*[39] *राजा बलिका शुक्राचार्य को दिए हुए उपदेश पर विचार करते–करते समाधिस्थित हो जाना।*[40] *समाधि से जगे हुए बलि का विचारपूर्वक समभाव से स्थित होना।*[41] *प्रह्लाद को भगवान द्वारा वरप्राप्ति, प्रह्लाद का आत्मचिन्तन करते हुए परमात्मा का साक्षात्कार करना और उनका स्तवन करते हुए समाधिस्थ हो जाना, तत्पश्चात पाताल की अराजकता का वर्णन और भगवान की विष्णु का प्रह्लाद को समाधि से विरत करने का विचार।*[42]

महर्षि उद्दालक की साधना, तपस्या और परमात्मप्राप्ति का कथन; सत्ता–सामान्य, समाधि और समाहित के लक्षण।[43] *वीतहव्य महामुनि की समाधि और उससे जागना, छः रात्रि तक पुनः समाधि, चिरकाल तक जीवन्मुक्त स्थिति उनके द्वारा दुःख–सुकृत आदि को नमस्कार और उनका परमात्मा में विलिन हो जाना।*[44] *कुंभ के अन्तर्निहित हो जाने पर राजा शिखिध्वज का कुछ काल तक विचार करने के पश्चात् समाधिस्थ होना, चूड़ाला का घर जाकर तीन दिन के बाद पुनः लौटना, राजा के शरीर में प्रवेश करके उन्हें जगाना और राजा के साथ उसका वार्तालाप।*[45]

ब्रह्म मे ही जगत की कल्पना तथा जगत का ब्रह्म से अभेद, पाषाणोपारव्यान का आरम्भ, वशिष्ठ जी का लोकगति से विरक्त हो सुदूर एकान्त में कुटी बनाकर सौ वर्षों तक समाधि लगाना।[46] *समाधिकाल में वशिष्ठ जी के द्वारा अनन्त चेतनाकाश में असंख्य ब्रह्माण्ड़ों का अवलोकन।*[47]।

समाधि के विषय में इस तरह भिन्न–भिन्न ग्रन्थों में विभिन्न ऋषियों द्वारा अपनी उच्च चेतना से अनुभव किया गया व्याख्यान प्रस्तुत किया गया है।

निश्कर्श :– विभिन्न ग्रन्थों में समाधि के अध्ययन के उपरांत हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि समाधि अमृत या अनश्वरता की अवस्था है, परन्तु उपयोगिता की दृष्टि से देखें तो हमें यह समझना चाहिए कि आत्मसाक्षात्कार हर व्यक्ति के जीवन की अनिवार्य आवश्यकता है। हमारे जन्म लेने का उद्देश्य ही आत्मा को जानना है। हमारे सुख–दुःख की न कोई सीमा है, न कोई अन्त; समाज के स्वास्थ्य तथा सुख में सुधार मात्र मृग–मरीचिका है। अतएव प्रत्येक व्यक्ति का यह अनिवार्य कर्तव्य है

कि स्वयं को मन की सीमाओं तथा चंचलताओं से मुक्त करे तथा ब्रह्माण्डीय चेतना अथवा अनन्त मन के साथ तादात्मय स्थापित करें।

'' असतो मा सद्गमय तमसो मा ज्योर्तिगमय मृत्योर्मा अमृतंगमय ऊँ भान्तिः भान्तिः भान्तिः '' (बृहदारण्यक उपनिशद्)

किसी भी व्यक्ति को इस बात से डरने की जरूरत नहीं है कि समाधि की उपलब्धि के लिए उसे अपनी दिनचर्या, विचारों तथा सांसारिक जिम्मेदारियों को छोड़ना होगा। समाधि की उपलब्धि के बाद भी आप सांसारिक जीवन बिता सकते है। सभी वस्तुएं वैसी ही रहती हैं परन्तु उनकी पृष्टभूमि बदल जाती है। क्योंकि आपकी दृष्टि शुद्ध हो जाती है। अब भी आप अपने परिवार के सदस्य रहते हुए व्यवसाय अथवा नौकरी करते है । भले ही आप में आरोग्य– प्रदान की चमत्कारी शक्ति न हो तथापि पृथ्वी पर आप सबसे अधिक प्रसन्न व्यक्ति होगें। इसके साथ ही आपकी उपस्थिति, आपका व्यक्तित्व, सलाह, शुभाशीष, विचार तरंगे आपके आसपास के लोगों में प्रेरणा, आत्मविश्वास उत्पन्न करेंगी, उनके रोग–शोक को दूर कर स्थायी सुख तथा शान्ति प्रदान करेगी।

संदर्भ सूची :–

1. योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः (*पंतजलि योगसूत्र 1/2*)
2. योगः समाधिः (*व्यास भाष्य सूत्र 1/1*)
3. तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधिः *(यो0 सू0 3/3)*
4. व्यास भाष्य (*सूत्र 3/3*)
5. समाधिश्च परो योगो बहुभाग्येन लभ्यते।
   गुरोः कृपाप्रसादेन प्राप्यते गुरूभक्तिः।। *(घे0 सं0 समाधि प्रकरण सत्र–1)*
6. विद्याप्रतीतिः स्वगुरूप्रतीतिरात्मप्रतीतिर्मनसः प्रबोधः। दिने–दिने यस्य भवेत्स योगी सुशोभनाभ्यासमुपैति सद्यः ।। *(घे0 स0 समाधि प्रकरण सूत्र–2)*
7. घटाद्भिन्नं मनः कृत्वा चैक्यं कुर्यात्परात्मनि। समाधिं तं विजानीयान्मुक्तसंज्ञो दशादिभिः ।। *(घे0 स0 समाधि प्रकरण सूत्र–2)*
8. अह ब्रह्म न चान्योऽस्मि ब्रह्मैवाहं न शोक भाव्। सच्चिदानन्दरूपोऽहं नित्यमुक्तः स्वभाववान्।।*(घे0 स0 समाधि प्रकरण सूत्र–4)*
9. शाम्भव्या चैव भ्रामर्या खेचर्य्या योनिमुद्रया। ध्यानं नादं रसानन्दं लयसिद्धिश्चतुर्विद्या।।*(घे0 स0 समाधि प्रकरण सूत्र–5)*
10. पञ्चधा भक्ति योगेन मनोमूर्च्छा च षड्विधा। षड्विधोऽयं राजयोगः प्रत्येकमवधारयेत*(घे0 स0 समाधि प्रकरण सूत्र–6)*
11. सम्यगाधीयत् एकाग्री क्रियते विक्षेपान्। परिहृत्य मनो यत्रः स समाधिः।। (*भोजराज*)
12. स्थितप्रज्ञस्य का भाषा समाधिस्थस्य केशव। स्थितधीः किं प्रभाषेत किमासीत व्रजेत किम्।। (*श्री0 भ0 गी0 2/54*)
13. श्रुतिविप्रतिपन्ना ते यदा स्थास्यति निश्र्चला। समाधावचला बुद्धिस्तदा योगमवाप्स्यसि।। (*श्री0 भ0 गी0 2/53)*
14. तं विद्याद् दुःखसंयोगवियोगं योगसञ्ज्ञितम्। स निश्र्चयेन योक्तव्यो योगोऽनिर्विण्णचेतसा।। (*श्री0 भ0 गी0 6/23*)

15. ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा कूटस्थो विजितेन्द्रियः। युक्त इत्युच्यते योगी समलोष्टाश्मकाञ्चनः।। (*श्री0 भ0 गी0 6/8)*
16. यत्रोपरमते चित्तं निरूद्धं योगसेवया। यत्र चैवात्मनात्मानं पश्यन्नात्मनि तुष्यति।।(*श्री0 भ0 गी0 6/20)*
17. सुखामात्यन्तिकं यत्तद्बुद्धिग्राह्यमतीन्द्रियम्। वेत्ति यत्र न चैवायं स्थितश्चलि तच्चतः।। (*श्री0 भ0 गी0 6/21*)
18. यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः। यस्मिन्स्थितो न दुःखेन गुरूणापि विचाल्यते।। *(श्री0 भ0 गी0 6/22)*
19. प्रशान्तमनसं ह्येनं योगिनं सुखमुत्तमम्। उपैति शान्तरजसं ब्रह्मभूतमकल्मषम्।। (*श्री0 भ0 गी0 2/53)*
20. ऊँ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते।। *(ईशावास्य उपनिषद् शान्तिमंत्र)*
21. यदा पंचावतिष्ठनते ज्ञानानि मनसा सह। बुद्धिश्च न विचेष्टति तामाहुः परमां गतिम्।। *(कठोपनिषद् 111/10)*
22. प्राणायाम द्विषटकेन प्रत्याहारः प्रकीर्तिः। प्रत्याहार द्विषटकेन जायते धारणा शुभा।। धारणा द्वादश प्रोक्तं ध्यानं योगविशारदै। ध्यान द्वादशकेनैव समाधिभिरधीयते।। *(यो0 चूड़ामणि उपनिषद् 111/113)*
23. शतं चैका च हृदयस्य नाड्.यस्तासां मूर्धानमभिनिः सूतैका। तयोर्ध्वमायन्नमृतत्वमेति विष्वड्डन्या उत्क्रमणे भवन्ति।। *(कठोपनिषद् 2/3/16)*
24. प्रत्याहारस्था ध्यानं प्राणायामोऽथ धारणा। तर्कश्चैव समाधिश्च भांऽगो योग उच्यते।। *(अमृतनाद उपनिषद 6)*
25. तेजोबिन्दुपनिषद् *(1/15–16)*
26. ध्यानबिन्दुपनिषद् *(41)*
27. अध्यात्मयोगाधिगमे न देवं मत्वा धीरो द्रर्षशोकौ जहाति।। (*कठोपनिषद् 1/21/2)*
28. न तस्य रोगो न जरा मृत्युः प्राप्तस्य योगाग्निमयं शरीरम्
(श्वेताश्वरोपनिषद् 2/12)
29. आत्मा पुराणं वेदानां (*स्कन्दपुराण*)
30. मय्येक चित्तता योग इति पूर्ण निरूपितम्। साधनान्यष्टधा तस्य प्रवक्ष्याम्यधुना श्रृणु।। यमाश्च नियमास्तावदासनान्यपि तण्मुख। प्राणायामास्ततः प्रोक्तः प्रत्याहारश्च धारणाः।। ध्यानं तथा समाधिश्च प्रोक्तः प्रत्याहारश्च प्रचक्षते *(ब्रह्मपुराण–12/1–2)*
31. न श्रृणेति न चाघ्राति न पश्यति न नम्यति। न च स्पर्शं विजानाति न संकल्पयते मनः।। न चाभिमन्यते किन्चिन्न च बुध्यति काष्ठवत्। एवमीश्वरसंलीनः समाधिस्थः सगीयते।। *(अग्निपुराण 376/3–4)*
32. समाधिना महाज्ञानी सूर्यचन्द्रमसोर्गतिः *(रूद्रायमल तत्र 24/140)*
33. अथेदानीं प्रवक्ष्यामि समाधिक्रममुत्तमम्। मृत्युध्नं च सुखोपायं ब्रह्मानदंकरम् परम्।। *(ह0 पृ0 चतुर्थोपदेश 1/2)*

34. राजयोगः समाधिश्च उन्मनी च मनोन्मनी। अमरत्वं लयस्तत्त्वं शून्याशून्यं परं पदम्।। अमनस्कं तथा द्वैतं निरालम्बं निरञ्जनम्। जीवन्मुक्तिश्च सहजा तूर्या चेत्येकवाचकाः।। *(ह0 प्र0 चतुर्थोपदेश 1/3–4)*
35. सलिले सैन्धवं यद्वत् साम्यं भजति योगतः। तथात्ममनसौरेक्यं समाधिरभिधीयते।। *(ह0 प्र0 चतुर्थोपदेश 1/5)*
36. यदा संक्षीयते प्राणो मानसं च प्रलीयते। तदा समरसत्वं च समाधिरभिधीयते। *(ह0 प्र0 चतुर्थोपदेश 1/6)*
37. तत्समं च श्योरैक्यं जीवात्मपरमात्मनोः। प्रनष्टसर्वसङ्कल्पः समाधिः सोऽभिधीयते।। *(ह0 प्र0 चतुर्थोपदेश 1/7)*
38. अष्टागंयोग हिन्दी भाषानुवाद *(पृ0 संख्या 104)*
39. योगवशिष्ठ *(सर्ग–17, पृ0 संख्या 108)*
40. योगवशिष्ठ *(सर्ग–27, पृ0 संख्या 248)*
41. योगवशिष्ठ *(सर्ग–29, पृ0 संख्या 250)*
42. योगवशिष्ठ *(सर्ग–34, पृ0 संख्या 258)*
43. योगवशिष्ठ *(सर्ग–54, पृ0 संख्या 276)*
44. योगवशिष्ठ *(सर्ग–84, पृ0 संख्या 312)*
45. योगवशिष्ठ *(सर्ग–101, पृ0 संख्या 422)*
46. योगवशिष्ठ *(सर्ग–54, पृ0 संख्या 501)*
47. योगवशिष्ठ *(सर्ग–59, पृ0 संख्या 503)*